सुदर्शन चक्र' और उसके संभावित परिणाम

पिछले दिनों दो बयानों ने राजनीति में तूफान खड़ा कर दिया (1)आडवाणी जी का जिन्ना के संबंध में पाकिस्तान में दिया गया बयान (2)सुदर्शन जी का राजनीति को तुलना वैश्या से करने वाला बयान। दोनों ने ही भारतीय राजनीति में कुछ हलचल पैदा की किन्तु भाजपा संघ से जुड़ी राजनीति में तूफान पैदा कर दिया।

इस तूफान की शुरूआत तब हुई जब संघ प्रमुख श्री सुदर्शन जी ने अटल, आडवाणी को पद छोड़ने की सार्वजनिक सलाह देकर भाजपा के नरमपंथी वर्ग पर अपने ''सुदर्शन चक्र'' से आक्रमण किया। उन्होंने अटल जी के राजनैतिक चरित्र पर आक्रमण करके अपने ''सुदर्शन चक्र'' की मारक शक्ति को और पैना कर दिया। अटल आडवाणी ग्रुप ने उस सुदर्शन चक्र से टकराने की अपेक्षा किनारे होकर स्वयं को बचा लिया। चक्र का प्रभाव शून्य हुआ और संघ परिवार में सुदर्शन जी के उक्त आकमण की छीछालेदर हुई।

नरमपंथी धड़ा तिलमिलाया हुआ था और मौके की तलाश में था। ऐसी ही तलाश में आडवाणी जी का धैर्य चूक गया। उन्होंने सुदर्शन जी द्वारा नरमपंथी धड़े के दो लोगों पर हुए व्यक्तिगत आक्रमण के बदले संघ परिवार की मूल नीतियों पर ही आक्रमण करने की योजना बनाई और ''जिन्ना धर्म निरपेक्ष'' के असत्य को किसी तरह तोड़ मरोड कर उसे सुदर्शन चक्र के विरूद्ध प्रयोग कर दिया। यदि संघ परिवार इस आक्रमण के विरूद्ध खड़ा नहीं होता तो इस आक्रमण का मारक प्रभाव होता। आडवाणी जी एक हीरो के रूप में सामने आते। भाजपा देश में मजबूत होती और संघ कमजोर । यह परिणाम नरमपंथी धड़े की विजय के रूप में होता किन्तु सेंघ परिवार ने प्रतिरोध का मार्ग चनने में जरा भी देर नहीं लगाई। आडवाणी जी का आक्रमण वापस लौटकर भाजपा को ही आहत कर गया जिसमें सर्वाधिक क्षति नरमपंथी धड़े को उठानी पड़ी।

आडवाणी जी ने पाकिस्तान में जिन्ना के लिये जो कुछ कहा वह असत्य था। जिन्ना धर्म निरपेक्ष थे या कट्टरवादी यह ऐतिहासिक शोध का विषय है किन्तु अब तक का जनमानस उन्हें कट्टरवादी ही मानता है। फिर भी आडवाणी जी ने जो कुछ कहा वह राष्ट्रहित में था। सत्तावन वर्ष बीत जाने के बाद नियंत्रण सीमा रेखा को ही राष्ट्रीय सीमा रेखा मानकर शान्ति से जीने का मार्ग प्रशस्त करना आज की आवश्यकता है। मैं मानता हूँ कि इससे दोनों ओर के कट्टरपंथियों की दुकानदारी खत्म हो जायेगी किन्तु कट्टरपथियों की दुकानदारी के आगे राष्ट्रहित की बलि तो नहीं चढ़ाई जा सकती। फिर भी आडवाणी जी को इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये जिन्ना को धर्मनिरपेक्ष कहने से बचकर कोई और संदर्भ खोजना चाहिये था। निश्चित रूप से उन्होंने इसमें चक की है। दूसरी चूक उन्होंने आर की कि इस प्रयोग के पूर्व उन्होंने अपने किसी साथी को विश्वास में नहीं लिया। आडवाणी जी की भाजपा में वैसी स्थिति नहीं जैसी कांग्रेस में सोनिया जी की या सघ परिवार में सुदर्शन जी की है। वैसे ही भाजपा में नरमपंथी और कट्टरपंथी नाम से दो धड़े रहे है जिसमें आडवाणो जी सिर्फ एक धड़े के नेता है और जब दोनों धड़ों में युद्ध को घोषणा सुदर्शन चक्र के असफल आक्रमण से हो चुकी हो तब तो बहुत सोच विचारकर और योजना बनाकर ही उन्हें आगे बढ़ना चाहिये था। अपनी व्यक्तिगत छवि को ऊपर उठाने के स्वार्थ के कारण वे इतनी तैयारी करने से कतरा गये।

सुदर्शन जी ने राजनीति का वैश्या कहा जो पूरी तरह सत्य है। राजनीति वास्तव में वैश्या होती है या नहीं यह तो शोध का विषय है किन्तु वर्तमान राजनीति तो पूरी तरह ही वैश्या का रूप ग्रहण कर चुकी है। राजनीति में पदलिप्सा तो एक सामान्य सी प्रक्रिया है किन्तु वर्तमान राजनीति तो लगभग पूरी तरह व्यवसाय का स्वरूप ग्रहण कर चुकी है। इस तरह सुदर्शन जी का कथन जनमानस की धारणा के अनुकूल है। किन्तु सुदर्शन जी ने उक्त टिप्पणी जिस संदर्भ में की वह समय उनकी नीयत पर संदेह उत्पन्न करता है। सुदर्शन जो स्वयं राजनीति से दूर हैं यह सही होते हुए भी वे राजनैतिक दल के संचालक हैं। यदि नहीं है तो उन्होंने अटल आडवाणी को पद त्याग की सलाह कैसे दी। विचार करने की बात है कि एक वैश्यालय का संचालक अपने अन्तर्गत काम करने वाली वैश्या से मतभेद होने पर उसे वैश्या कहकर अपमानित करे इससे उस वैश्यालय के संचालक का सम्मान घटेगा ही। निश्चित रूप से सुदर्शन जी ने राजनीति को वैश्या कहने के लिये जो समय चुना उससे सामान्य लोगों में आडवाणी जी का अपमान हुआ है किन्तु समझदार लोगों में सुदर्शन जी की टिप्पणी गलत संदेश पहुंचायेगी और उनकी समझदार गंभीर छवि को धक्का लगेगा ऐसा मेरा मत है ।

भाजपा के दोनों धड़ों का विवाद भाजपा को नुकसान करेगा विशेषकर संघ समर्थक धड़े को यह निश्चित है। नरमपंथी धड़ा राष्ट्रीय राजनीति की मुख्य धारा में शामिल होकर परिस्थिति अनुसार स्वरूप ग्रहण कर लेगा यह निश्चित है। किन्तु संघ समर्थित धड़ा क्या करेगा। उसकी शक्ति तो निश्चित रूप से घटेगी ही। वह किसी के साथ सामंजस्य भी नहीं कर सकेगा। कट्टरपंथी धड़ा यदि भाजपा में निर्णायक बढ़त प्राप्त भी कर लें तो भारतीय राजनीति में उसका स्वरूप कहॉ और कसा होगा यह सोचने का विषय है। जनमानस में कट्टरवाद से भावनात्मक उबाल तो आता है पर वह टिकता नहीं। भाजपा का यह विवाद जनमानस में कोई भावनात्मक उबाल नहीं ला सकता क्योंकि भारत विभाजन या मंदिर के मुद्दे तो अब फटे हुए गुब्बारे के समान हैं। ऐसे में अस्तित्व का संकट संघ समर्थक गुट के समक्ष है जो भाजपा के युद्ध म लड़ाई जीतकर भी राष्ट्रीय राजनीति में निरंतर कमजोर हो रहे हैं।

भाजपा और संघ को इस टकराव से चाहे जितनी क्षति हो किन्तु देश को इससे बहुत लाभ हागा। भाजपा ने भारतीय राजनीति को भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, श्रम प्रधान अर्थनीति, मैत्रीपूर्ण विदेश नीति आदि से खींचकर मुस्लिम कट्टरवाद विरूद्ध हिन्दुत्व की पटरी पर चलाने का प्रयास किया। पाकिस्तान बंटवारे के घाव और संघ के कार्यकर्ताओं की उज्जवल और ईमानदार छवि के कारण संघ अब तक किसी तरह राजनीति का इस पटरी पर खींचता भी रहा। संघ की इस जिदद के परिणामस्वरूप राजनीति में अपराधियों, भ्रष्टाचारियों आर वर्ग संघर्ष कराने वालों के नौ बारह बने रहे। ऐसे लोग अनेक दल बनाकर या दलों में शामिल होकर दोनो ही पक्षों में समर्थन पाते रहे। नई परिस्थिति में भाजपा का कट्टरवादी धड़ा राजनीति को मुस्लिम कट्टरवाद विरूद्ध हिन्दुत्व की पटरी पर नहीं चला सकेगा। राजनैतिक समीकरण बदलेंगे। कांग्रेस और नरमपंथी भाजपा के धड़ों में दूरियॉ कम होंगी, भ्रष्टाचार और अपराधीकरण की राजनीति करने वालों के बुरे दिन आयेंगे और राजनीति की गाड़ी ठीक दिशा में चलने लगेगी। सबसे बड़ा चमत्कार यह भी संभव है कि जो काम संघ इतने दिनों तक नहीं कर पाया वह काम नई परिस्थिति में बिल्कुल आसान हो जावें अर्थात् संघ रहित भाजपा का समर्थन पाकर कांग्रेस पार्टी भी मुस्लिम तुष्टीकरण से किनारा कर ले और इस्लामिक कट्टरवाद नई परिस्थिति में असहाय सा हो जावे।

,,,,,,,,

प्रिय बंधु,

ज्ञान तत्व अंक, पंचान्नवे में मेरा एक लेख '' भारत में राजनैतिक दल या दलदल '' प्रकाशित हुआ है। यह लेख मैंने दस मई को दिल्ली में लिखा था और उसकी एक प्रति नवभारत टाइम्स को छपने के लिये दी थी। छपा या नहीं पता नहीं। यह लेख ज्ञानतत्व में छपते छपते विलम्ब हुआ। इस बीच अडवाणी जी का जिन्ना प्रकरण आ गया। मुझे महसूस होता है कि इस लेख में मैंने तो कुछ लिखा था वह सोच अब किस तरह ठीक दिशा में बढ़ रही है। मैने अपने नये लेख में अपने उसी पुराने विचार को आगे बढ़ाने का प्रयास किया है।

बंधुवर,

व्यवस्था परिवर्तन अभियान सम्मेलन दो, तीन और चार सितम्बर शुक्रवार, शनिवार और रविवार को दिल्ली में आयोजित है। ग्यारह, बारह और तेरह सितम्बर की तारीखें बदलकर नई तारीखें घोषित हुई है। सम्मेलन सिर्फ तीन ही दिनों में पूरा करना है और विषय बहुत बड़ा है। हमें किसी निष्कर्ष तक पहुंचना भी है। इसलिये कार्य प्रणाली में कुछ बदलाव किया गया है। सम्मेलन में मेरा या मेरे जैसे प्रमुख वक्ताओं को कोई भाषण नहीं होगा। पहले और दूसरे दिन रात सात से आठ तक सिर्फ एक घंटे में दा दो या तीन तीन भाषण होंगे। मैं और अन्य सभी प्रमुख वक्ता अपने अपने विचार लिखकर पूर्व में दे दें। उनके विचार प्रिन्ट कराकर सभी सहभागियों को पूर्व तैयारी हेतु दे दिये जायें या भेज दिये जायेंगे। सम्मेलन के पहले दिन प्रथम सत्र में वर्तमान व्यवस्था का मूल्यांकन तथा व्यवस्था परिवर्तन क्यों? विषय पर चर्चा होगी । उसी दिन शाम के सत्र में व्यवस्था परिवर्तन क्या? विषय पर चर्चा होगी । इन दो विषयों पर मैंने अपना प्रारंभिक भाषण तैयार किया है जो इस अंक में जा रहा है। आप इन दोना विषयों पर अपने विचार भेंजे तो हम उन्हें भी प्रकाशित करें। इन विषयों पर अन्य प्रमुख वक्ताओं के भाषण भी आप तक भेजे जायेंगे। तीन सितम्बर को प्रातः के सत्र में नई व्यवस्था की संक्षिप्त रूप रेखा, शाम के सत्र में व्यवस्था परिवर्तन कैस ? चार तारीख को प्रथम सत्र में कार्य योजना तथा द्वितीय सत्र में घोषणाएँ और समापन है। दो विषयों पर अभी विचार

2/2/96 ख लेख वर्तमान व्यवस्था का मूल्यांकन और व्यवस्था परिवर्तन की आवश्यकता

प्रवृत्ति के आधार पर व्यक्ति तीन प्रकार के होते है (1) सामाजिक (2) असामाजिक (3) समाज विरोधी। एक एक्सीडेंट ट्रेन के कराहते हुए यात्रियों की सेवा करने वाला सामाजिक (social)कराहते हुए यात्रियों को देखकर भी सेवा न करके अन्य कम महत्व के कार्यों में लगा हुआ असामाजिक (unsocial) तथा कराहते हुए। यात्रियों का सामान लूट कर ले जाने वाला समाज विरोधी (Antisocial) माना जाता है। समाज में सामाजिक लोगों की संख्या भी बहुत कम होती है और समाज विरोधी लोग भी कम ही होते हैं। अधिक बड़ी संख्या तो असामाजिक (unsocial) लोगों की ही होती है।

व्यवस्था के आधार पर चार खंड माने जाते हैं। (1) आध्यात्म (2) धर्म (3) समाज (4) राज्य। इन चारों का संतुलन ही व्यवस्था का निर्माण करता है तथा इन चारों के संतुलन से बनी व्यवस्था ही आसुरी प्रवृतियों से दैवी प्रवृतियों की या समाज विरोधियों से सामाजिक लोगों की सुरक्षा करती है। इन चारों अंगों के कार्य भी भिन्न होते हैं और परिणाम भी। आध्यात्म व्यक्ति को समाज से दूर आत्मकेन्द्रित बनाता है। धर्म व्यक्ति को कर्त्तव्य का ज्ञान और प्रेरणा देकर उसे निरंतर सामाजिक दिशा की ओर जाने की राह बताता है। समाज व्यक्ति को अनुशासित करता है और जो व्यक्ति समाज के अनुशासन की परवाह न करते हुए आपराधिक पृष्ठ भूमि के समाज विरोधी कार्य करता है, राज्य उसे दण्ड देकर शासित करता है। धर्म किसी को दण्डित नहीं कर सकता। वह तो मात्र ईश्वर के अदृश्य भय से व्यक्ति के कर्त्तव्य की ओर अग्रसर करता है। समाज व्यक्ति को अप्रत्यक्ष दण्ड से भयभीत कर सकता है जिसमें सामाजिक बहिष्कार या सामाजिक अपमान प्रमुख है। राज्य ही एकमात्र ऐसी ईकाई है जो व्यक्ति की आपराधिक प्रवृत्तियों के शमन के लिये उसे दण्डित कर सकता है जो अर्थदण्ड से लेकर जल और मृत्युदण्ड तक हो सकता है। व्यवस्था के उपरोक्त चार खंडा मं से यदि कोई एक भी खंड कमजोर होता है तो असंतुलन पैदा होता है। वर्तमान समय मे राज्य ने समाज को निगल लिया है। अनुशासन पूरी तरह समाप्त हो गया और अनुशासन का स्थान शासन ने ग्रहण कर लिया क्योंकि राज्य ने समाज के सभी कार्य अपने उपर ले लिये। जब जब भी राज्य मजबूत होकर समाज को कमजोर करता है तब तब धर्म समाज की सहायता के लिये आगे आता है रामायण काल में भी यही हुआ और महाभारत काल में भी। रामायण काल में राम ने राज्य व्यवस्था से टकराकर समाज शक्ति को मजबूत किया और महाभारत काल में कृष्ण ने। वर्तमान समय में भी व्यवस्था में जो असंतुलन पैदा हुआ है वह अब सिर्फ राजनीति शास्त्र का विषय नहीं रह गया है क्योंकि राजनीति ने तो यह संकट पैदा ही किया है। सच्चाई यह है कि यह पूरी तरह समाज शास्त्र का विषय बन गया है। यही कारण है कि आज की बैठक में राजनीतिज्ञ मात्र के आह्वान के स्थान पर पूरे समाज का आह्वान किया गया है और धर्म प्रधान लोगों को इसमें आगे भूमिका दी जा रही है।

राज्य और समाज एक दूसरे के पूरक हैं। समाज के प्रतिनिधियों ने अपनी सारी शक्ति राज्य की आवश्यकता को ही नकारने में लगा दी। आज भी हमारे कुछ विद्वान राज्य विहीन व्यवस्था की वकालत करते हैं। दूसरी ओर राज्य ने समाज को अक्षम अयोग्य और अपढ़ कह कह कर अल्पवयस्क प्रमाणित कर दिया। राज्य और समाज एक दूसरे क पूरक न रहकर प्रतिस्पर्धी हो गये। राज्य की भूमिका एक या दो प्रतिशत अपराधियों के लिये महत्वपूर्ण नियंत्रक की तथा अठान्नवे प्रतिशत समाज के लिये शून्य हस्तक्षेप की होनी चाहिये थी। समाज में सिर्फ दो वर्ग बनने थे असामाजिक और समाज विरोधी। राज्य की भूमिका न्याय और सुरक्षा तक सीमित और महत्वपूर्ण होनी चाहिये थी किन्तु हुआ ठीक उल्टा। दो प्रतिशत अपराधियों मं तो राज्य का हस्तक्षेप नगण्य और अठान्नवे प्रतिशत समाज मं महत्वपूर्ण हो गया। परिणाम जो स्वाभाविक था वही हुआ। पांच प्रकार के अपराध राज्य की निष्क्रियता के कारण बढ़ने लगे और छः प्रकार की समस्याएँ राज्य की अति संक्रियता के कारण बढ़ने लगी। सभी प्रकार के अपराधी भयमुक्त हो गये और समाज के लोग पुलिस से भी डरने लगे और गुण्डों से भी। चोरी, डकैती, मिलावट, बलात्कार, जालसाजी, धोखा, हिंसा, आतंक आदि अपराध खुले आम होने लगे। अपहरण ने एक उद्योग का रूप ग्रहण कर लिया। नागरिकों का कानून पर से विश्वास उठने लगा। भारत का प्रत्येक नागरिक (First attack is well defence)की नीति पर विश्वास करने लगा ।

छः प्रकार की समस्याएँ भी बढ़ने लगी। राज्य ने जिस गति से अधिकार अपने पास इकट्ठे किये उसी गति से भ्रष्टाचार बढ़ा। (Power Corrupts and absolute power absolutely corrupts)के आधार पर भ्रष्टाचार असीमित हो गया। इसी तरह राज्य जिस गति से समाज की सामाजिक गतिविधियों में हस्तक्षेप करने लगा उसी तीव्र गति से आम नागरिक के चरित्र में गिरावट आई। आज चरित्र पतन भी एक समस्या बन गया है।

भारत विभाजन के बाद हमने साम्प्रदायिकता के समापन की उम्मीद बांधी थी। भारत तो विभाजित हुआ किन्तु साम्प्रदायिकता फिर भी वैसी की वैसी फन उठाये खड़ी है। आज भारत का मुसलमान फिर से विभाजन पूर्व की तरह ही आरक्षण की मांग तक आगे बढ़ गया है और राजनैतिक दल उसी तरह उस पर विचार करने का आश्वासन दे रहे हैं। जातीय कटुता भी बढ़ रही है। छुआछूत तो लगभग समाप्ति की ओर है। जाति प्रथा भी दम तोड़ रही है किन्तु जातीय कटुता बढ़ रही है। आर्थिक असमानता और श्रमशोषण भी तीव्र गति से बढ़ रहा है। सम्पूर्ण समाज व्यवस्था में धन का प्रभाव और महत्व बढ़ा है। उसी तरह श्रम शोषण के भो नये नये तरीके इजाद हो रहे हैं।

भारत राष्ट्र के रूप में उन्नति कर रहा है। भौतिक विकास तीव्र गति से हो रहा है किन्तु समाज निरंतर पीछे जा रहा है। ग्यारह समस्याएँ लगातार बढ़ रही है। सभी राजनैतिक दल भौतिक विकास को लक्ष्य बनाकर उसके आनुपातिक आंकड़े प्रति सप्ताह प्रसारित करते रहते हैं किन्तु पांच प्रकार के अपराध और छः प्रकार की समस्याओं में वृद्धि के अनुपातिक आंकड़े कभी वर्ष भर में भी प्रकाशित नहीं होते। किसी भी राजनैतिक दल के पास इन ग्यारह समस्याओं में से किसी एक भी समस्या का न कोई समाधान है, न समाधान की योजना और न ही समाधान की इच्छा शक्ति। सभी राजनैतिक दलों ने भौतिक विकास को ही अपनी सफलता का मापदण्ड मानकर उसी पर राजनीति शुरू कर दी है। एक राजनैतिक दल ने तो भौतिक विकास को ही आधार बनाकर चुनावों में (Feel Good) तक का नारा दे दिया था और दूसरा राजनैतिक दल अब उक्त भौतिक विकास को मानवीय चेहरा देने की घाषणा करने की तैयारी कर रहा है, जबकि सच्चाई यह है कि भारत का आम नागरिक ग्यारह समस्याओं की वृद्धि स्वरूप अपने विदृप चेहरे को देख देख कर दखी है।

राज्य का प्रमुख दायित्व है न्याय आर सुरक्षा। किन्तु जब राज्य की व्यवस्था बदल जाती है और वह न्याय और सुरक्षा के स्थान पर भौतिक विकास को अपना लक्ष्य मान लेता है तो उसे अपने अस्तित्व की रक्षा और समाज को धोखा देने के लिये दस प्रकार के नाटक करने पड़ते है :–

1. समाज को कभी एक जुट नहीं होने दना। उसे आठ आधारों, धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, आर्थिक स्थिति तथा उत्पादक उपभोक्ता पर वर्ग निर्माण करके वर्ग विद्वेष बढ़ाना और वर्ग संघर्ष तक ले जाना।

2. राष्ट्र शब्द और राष्ट्र भावना को उपर उठाकर समाज शब्द ओर समाज भावना को कमजोर करना।

3- समाज के प्रत्येक नागरिक में हीन भावना का विकास करने के लिये उसे अक्षम अयोग्य और अपढ़ प्रचारित करना। उसे आत्म निर्भरता के मनोभावों से हटाकर राज्य निर्भर बनाते जाना।

4- समाज के प्रत्येक नागरिक में अपराध भाव मजबूत करने के लिये अपराध शब्द की परिभाषा को कानून के उल्लंघन के साथ जोड़ देना। इतने अधिक कानून बनाना कि प्रत्येक व्यक्ति कानूनों का उल्लंघन करने को बाध्य हो और अपराध भाव से ग्रसित होकर सिर झुका कर जीना सीख ले।

5- समाज में वैचारिक मुद्दों को पीछे करके भावनात्मक मुद्दों पर बहस छेड़ना। भारत के आम चुनाव तक कभी प्याज और कभी मंदिर मुद्दे पर लड़े गये जबकि दोनों ही पूरी तरह भावनात्मक मुद्दे थे वैचारिक नहीं। संसद की कार्य प्रणाली में भी बहस पूरी तरह भावनात्मक ही होती है, वैचारिक नहीं ।

6- राज्य की सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक समस्याओं की ठीक विपरीत समाधान करना। (क) दहेज, छुआछूत, सामाजिक असमानता, जुआ आदि सामाजिक समस्याओं को रोकने के लिये प्रशासनिक या आर्थिक समाधान (ख) चोरी–डकैती, मिलावट, हिंसा, बलात्कार, आतंकवाद आदि प्रशासनिक समस्याओं का सामाजिक, आर्थिक समाधान (ग) बेरोजगारी, श्रमशोषण, बालश्रम, अशिक्षा आदि आर्थिक समस्याओं का सामाजिक या प्रशासनिक समाधान। आज राज्य तो ऐसा विपरित आचरण कर ही रहा है किन्तु अनेक सामाजिक संस्थाएँ भी डाकुओं का हृदय परिवर्तन और दहेज या गांजा वाले को जेल में बंद करने की मांग करते देखी जाती है।

7- किसी भी समस्या का इस तरह समाधान करना कि उसके (By Product) के रूप में एक नई समस्या का जन्म और विस्तार हो।

8- बिल्लियों के बीच बंदर की भूमिका। असमान रोटी वाली बिल्लियों के बीच बंदर की भूमिका के तीन अंग होते हैं (क) बिल्लियों को रोटी कभी बराबर न हो (ख) बंदर हमेशा असमान रोटियों को बराबर करने में सक्रिय दिखें, किन्तु करे नहीं और (ग) छोटी रोटी वाली बिल्ली के मन में असतोष की ज्वाला निरंतर जलती रहे।

9- आर्थिक असमानता वृद्धि के लिये अप्रत्यक्ष अथ नीति। आर्थिक असमानता को प्रजातांत्रिक तरीके से बढ़ान के लिये दो काम करने होते हैं, (क) जो वस्तुएँ गरीब लोग अधिक मात्रा में प्रयोग करें और अमीर कम मात्रा में, उन पर अप्रत्यक्ष करारोपण और प्रत्यक्ष सब्सीडी और (ख) जो वस्तु अमीर लोग अधिक मात्रा में उपयोग करें और गरीब कम उन पर प्रत्यक्ष कर और अप्रत्यक्ष सब्सीडो।

10- न्याय और सुरक्षा को प्राथमिकताओं के क्रम में सबसे नीचे रखना। समस्याएँ पांच प्रकार की होती हैं (क) वास्तविक – चोरी–डकैती, मिलावट, बलात्कार, धोखा, जालसाजी, हिंसा, आतंक (ख)कृत्रिम – भ्रष्टाचार, चरित्र पतन, साम्प्रदायिकता जातीय कटुता, आर्थिक असमानता, श्रमशोषण

(ग) प्राकृतिक– बाढ़, भूकम्प, बोमारियॉ, अकाल, सूखा आदि। (घ) भूमण्डलीय– बढ़ती आबादी, पर्यावरण प्रदूषण, जल संकट (ड़)सामाजिक– बालश्रम, दहेज, छुआछूत, महिला शोषण आदिवासी, हरिजन शोषण, बालविवाह, गांजा, शराब, हेरोइन आदि।

इन पांच प्रकार की समस्याओं के समाधान की प्राथमिकताएं उपर लिखें कम में होनी चाहिये थी। सबसे अधिक शक्ति वास्तविक समस्याओं के नियंत्रण पर और सबसे कम सामाजिक समस्याओं के निवारण पर लगनी थी किन्तु हुआ ठोक विपरीत। पूरा का पूरा कम उलट दिया गया। भारत के सम्पूर्ण केन्द्रोय और प्रादेशिक सरकारों के बजट का सिर्फ एक प्रतिशत मात्रा पुलिस और कोर्ट पर खर्च होता है। इस एक प्रतिशत बजट में भी नब्बे प्रतिशत सामाजिक असमानता नियंत्रण में लग जाता है। अपराध नियंत्रण पर भारत के सम्पूर्ण बजट का एक सौ रूपये में से सिर्फ दस पैसा हो खर्च हाता है।

अवैध बन्दूक पिस्तौल जैसे घातक हथियार रखने वालों के मुकदमें लोअर कोर्ट में, अवैध अनाज रखने वालो के सेशन कोर्ट मे और अवैध गांजा रखने वालो के स्पेशल कोर्ट में चलने के प्रावधान हैं। सामान्य मारपीट को धारा 323 में डालकर पुलिस हस्तक्षेप स बाहर और जुआ और दहेज जैसे अपराधों को पुलिस हस्तक्षेप योग्य बना दिया गया। आज तक किसी भी प्रधानमंत्री ने अपराध नियंत्रण को अपनी प्राथमिकताओं के क्रम में शामिल ही नहीं किया भले ही गरीबी, अशिक्षा, चेचक आदि उन्मूलन इनकी प्राथमिकताओं में शामिल रहे। सर्वोच्च न्यायालय भी भूख से मृत्यु को बलात्कार, डकैती या आतंकवादी हत्या की अपेक्षा शासन की बडो विफलता घोषित करते रहता है।

उपरोक्त दस प्रकार के नाटक करने में कोई भी राजनैतिक दल पीछे नहीं है। सभी दलों में आगे से आगे जाने की होड़ मची हुई है। इन नाटकों को ही समस्याओं का समाधान सिद्ध करने के लिये गोयबल्स की नीति को आधार बनाकर झूठ को सौ बार बोला जा रहा है :–

क. जब तक चरित्र नहीं सधरेगा तब तक कुछ नहीं सुधरेगा। यह बात पूरी पूरी तरह गलत है। सन् सतालीस में सबका चरित्र आज से कई गुना अच्छा था। फिर चरित्र में गिरावट क्यों आई। स्पष्ट है कि व्यवस्था दोषपूण थी जिसका प्रभाव चरित्र पर पड़ा।
ख. रसोई गैस आम उपयोग की वस्तु है :– यह बात भी पूरी तरह चालाकी भरी है। रसोइ गैस आम उपयोग की वस्तु है तो साईकिल क्या आम उपयोग की नहीं है ?
ग. मिट्टी तेल गरीब लोग उपयोग करते हैं तो खाद्य तेल कौन उपयोग करता है?
घ. लोगों का जीवन स्तर सुधरेगा तो अपराध स्वयं घट जायेंगे – गलत है आर्थिक या बौद्धिक स्तर पर अधिक सक्षम लोग कम अपराध करें यह बिल्कुल गलत है।
ड़ अपराध अपराध होता है चाहे वह सामाजिक हो या गैरकानूनी – गलत है। अपराध और गैर कानूनी में बहुत अन्तर होता है।

ऐसी ही और भी अनेक बातें बार बार बोलकर फैलाई जा रही हैं। इन असत्यों को प्रचारित करने में विदेशी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। साम्यवादी देश भारत में फैले अपने लोगों को धन दे देकर यह प्रचारित कराते हैं कि भारत की प्रमुख समस्याएं हैं गरीबी, आर्थिक असमानता, शिक्षित बेरोजगारी, सामाजिक अन्याय। इन सबका समाधान है वर्ग संघर्ष। दूसरी ओर दुनिया के पूंजीवादी देश भारत के अनेक लोगों को धन दे देकर बाल श्रम, बाल विवाह, अशिक्षा, कुपोषण, जल संकट, पर्यावरण प्रदूषण, बढ़ती आबादी, नशा आदि को प्रमुख समस्याऍ बताकर इनके समाधान पर सर्वाधिक आर्थिक प्रशासनिक शक्ति लगाने की वकालत करते हैं। पूंजीवादी और साम्यवादी देश अपने धन से संचालित इन लोगों से अनावश्यक या कम आवश्यक समस्याओं की वीभत्स रूप समाज के सामने प्रस्तुत कराकर उनका राष्ट्रहित विरोधो समाधान भी प्रचारित कराते हैं। ये भारत के कुछ लोगों को पुरस्कार और सम्मान का लालच देकर तथा शासन को कर्ज या छूट देकर ऐसी ही समस्याओं के पक्ष म वातावरण बनवाते हैं। परिणाम स्वरूप विदेशी धन के पवाह में भारत की वास्तविक समस्याऍ नेपथ्य में चली जाती है। आज तक भारत में समस्याऍ और उनके समाधान का कोई स्वदेशी चिन्तन आगे नहीं बढ़ पाया। स्वदेशी के नाम पर यदि कोई बात आगे भी बढ़ी तो वह स्वदेशी शीतलपेय, स्वदेशी भाषा, स्वदेशी खानपान और स्वदशी वेष–भूषा तक आकर ही सिमट गई। कभी स्वदेशी संविधान, स्वदेशी राज्य व्यवस्था या समस्याओं की पहचान और समाधान की स्वदेशी तकनीक पर विचार मंथन नहीं हुआ। भारत की राजनैतिक व्यवस्था के दोष पूर्ण कार्यान्वयन के कारण ही सम्पूर्ण समाज में ग्यारह समस्याऍ बढ़ी। समाज में चरित्र पतन का एक मात्र कारण केन्द्रित राजनैतिक व्यवस्था ही रही और दोषपूर्ण राजनैतिक व्यवस्था का आधार ह दोषपूर्ण संवैधानिक व्यवस्था। समाज में भ्रष्टाचार अस्सी से नब्बे और अपराधीकरण लगभग दो प्रतिशत के आस पास है जबकि राजनीति में भ्रष्टाचार निन्यान्नवे प्रतिशत तथा अपराधीकरण सोलह प्रतिशत के आस पास है। समाज की अपेक्षा राजनीति में भ्रष्टाचार भी बहुत अधिक है और अपराधीकरण भी। इसके बाद भी राजनैतिक व्यवस्था का ऐसा संवैधानिक ताना बाना बुना गया कि व्यक्ति और समाज के अधिकारों और कर्त्तव्यों की अधिकतम सीमा भी राज्य ही तय करेगा। व्यक्ति या परिवार न राज्य के अधिकारों की अधिकतम सीमाऍ तय कर सकता है न ही अपने या पारिवारिक अधिकारों की। व्यक्ति परिवार और समाज राज्य निर्भर हो गया। राज्य की भूमिका मैनेजर की न होकर अभिरक्षक (Custodian) की हो गई। यह एक संवैधानिक दोष था कि हमारी संसद को कस्टोडियन की भूमिका दी गई जो उसी परिस्थिति में अल्पकाल के लिये मैनेजर को दी जाती है जब मालिक पागल, गंभीर बीमार या नाबालिक हो तथा बौद्धिक दृष्टि से निर्णय लेने में अक्षम हो। हमारे देख की संसदीय कार्य प्रणालो में संसद को कस्टोडियन के अधिकार देकर मालिक अर्थात् जनता को इतनी ही भूमिका दी गई कि वह पांच वर्ष में चाहे तो उक्त कस्टोडियन की जगह बदलकर दूसरा कस्टोडियन नियुक्त कर सकते है। संवैधानिक व्यवस्था में एक विशेष षड़यंत्र के अन्तर्गत कस्टोडियन को ही यह अधिकार दे दिया गया कि मालिक स्वस्थ या बालिग हुआ कि नहीं इसका अन्तिम निर्णय कस्टोडियन ही कर सकेगा, मालिक या कोई अन्य इकाई नहीं। राजनैतिक व्यवस्था को संवैधानिक व्यवस्था द्वारा कस्टोडियन का स्वरूप देने के कारण मैनेजर मालिक के रूप में सर्वशक्तिमान हो गया ओर जनता गलाम के रूप में असहाय। भारतीय राजनीति मे जितना भ्रष्टाचार अपराधीकरण और उच्चश्रृंखलता आई और बढ़ी उन सबका एकमात्र कारण भारतीय संसद का अभिरक्षक (कस्टोडियन) स्वरूप का होना है। संसद को अल्पकाल के लिये भी अभिरक्षक का स्वरूप देना उचित नहीं था क्योंकि अभिरक्षक की मालिक से अधिक योग्यता और क्षमता का हाना उसकी अनिवार्य शर्त होती है। जबकि संसद में जाने वाले अभिरक्षकों की योग्यता किसी भी स्थिति में मालिक से अधिक नहीं है। ऐसी स्थिति में अभिरक्षक को निर्णायक रूप में सदा के लिये अभिरक्षक का स्वरूप और अधिकार प्रदान करना षड़यंत्र तो था ही सारी समस्याओं की जड़ भी है। अन्त में इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि

1- भारत की सम्पूर्ण सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था पतनोन्मुख है। ग्यारह समस्याऍ बढ़ रही है और राजनैतिक व्यवस्था इन समस्याओं के समाधान के स्थान पर दस पकार के नाटकों में संलग्न हैं।
2- भारतीय राजनीति पूरी तरह उच्चश्रृंखल और बेलगाम हो गई है। उसे दो प्रतिशत अपराधियों पर नियंत्रण और अठान्नवे प्रतिशत को सुरक्षा देना चाहिये था। भारतीय व्यवस्था ने दो प्रतिशत अपराधियों से सामंजस्य और अठान्नवे प्रतिशत क सामाजिक जोवन में अधिकाधिक हस्तक्षेप किया।

3- भारत में बढ़ रही ग्यारह समस्याओं का मूल कारण पांच अपराधों नियंत्रण में शासन की निष्क्रियता और छः समस्याओ के समाधान में अति सक्रियता है।

4- भारत की ग्यारह समस्याओं का कारण दोषपूर्ण राजनैतिक व्यवस्था है। इस दोषपूर्ण राजनैतिक व्यवस्था के कारण ही राजनैतिक उच्चश्रृंखलता में वृद्धि हुई है।

5- दोष पूर्ण राजनैतिक व्यवस्था का मुख्य कारण दोषपूर्ण संवैधानिक व्यवस्था है। भारतीय संविधान में कुछ संशोधन करने से ग्यारह समस्याओं का भी समाधान संभव है और उच्चश्रृंखल राजनीति पर भी नियंत्रण पर नियंत्रण संभव है।

इस तरह भारतीय राजनैतिक व्यवस्था पूरी तरह अपराधियों, राजनेताओं, बुद्धिजीवियां तथा धनपतियों का शरीफों, गरीबों तथा श्रमजीवियों के विरूद्ध एक सुनियोजित षड़यंत्र है। भारतीय संविधान इस षड़यत्र को शक्ति देता है। इस षड़यंत्र से मुक्ति पाने हेतु व्यवस्था परिवर्तन ही एक मात्र मार्ग है।

2/2/96 ग लेख व्यवस्था परिवर्तन क्या ?

व्यवस्था चार प्रकार की मानी जाती है :– (1) सुव्यवस्था (2)कुव्यवस्था (3)अव्यवस्था (4)स्वव्यवस्था । चारों के अलग अलग गुण अवगुण और पहचान होती है। सुव्यवस्था का गुण है कि शासन भय से सब लोग ठीक ठीक काम करते हैं और शासक भी ठीक होता है। सुव्यवस्था में शासन को समाज से भय होता है। कव्यवस्था में शासन के भय से समाज के लोग तो बिल्कुल ठीक ठीक काम करते हैं किन्तु शासक स्वयं भ्रष्ट या दुष्चरित्र होता है। शासन किसी से डरता भी नहीं। अव्यवस्था मं समाज में दुष्ट लोग निर्भय होकर अपराध करते हैं और शासन भी भ्रष्ट और दुष्चरित्र प्रवृत्ति को रोकने का कोई प्रयत्न नहीं करता। स्वव्यवस्था में दुष्ट लोग शासन के भय से ठीक ठीक काम करता है। व्यवस्था में शासन भी कर्त्तव्य समझकर ठीक काम करता है।

तानाशाही में या तो सुव्यवस्था होती है या कुव्यवस्था। तानाशाही में न कभी स्व व्यवस्था संभव है न अव्यवस्था। पचहत्तर के आपातकाल और स्वतंत्रता पूर्व की तानाशाही के समय की आज भी लोग प्रशंसा करते ह जब अव्यवस्था बिल्कुल नहीं थी। राजा या नेता चाहे जितनी गड़बड़ी कर ले किन्तु समाज में पूरी पूरी कुव्यवस्था थी। लोकतंत्र में न सुव्यवस्था संभव है न कुव्यवस्था। लोकतंत्र में या तो अव्यवस्था हो सकती है या स्व व्यवस्था। चारों प्रकार की व्यवस्थाओं में सुव्यवस्था या स्व व्यवस्था सबसे अच्छी कुव्यवस्था का कुछ कम बुरा माना जाता है। इस तरह व्यवस्था के आधार पर तानाशाही और प्रजातंत्र के परिणामों में ज्यादा अन्तर नहीं है। यही कारण है कि आज भारत में अनेक लोग कुछ समय के लिये सैनिक शासन की भी आवश्यकता प्रतिपादित करते पाये जाते हैं। अव्यवस्था की अपेक्षा कुव्यवस्था या सुव्यवस्था अच्छी होते हुए भी तानाशाही की अपेक्षा कुव्यवस्था या सुव्यवस्था अच्छी होते हुए भी तानाशाही की अपेक्षा लोकतंत्र को अच्छा माना जाता है। तानाशाही में समाज का नहीं रहता जबकि लोकतंत्र को हम अपनी इच्छा से बदल सकते हैं। तानाशाही से मुक्ति के लिये बहुत कुर्बानी देनी पड़ती है। लोकतंत्र स हम कभी भी मुक्ति पा सकते हैं। यही कारण है कि अव्यवस्था के बाद भी तानाशाही को बिल्कुल पसंद नहीं किया जाता। इस तरह व्यवस्था पर विचार करते समय न कुव्यवस्था पर विचार किया जाता है न सुव्यवस्था पर। विचार मंथन सिर्फ अव्यवस्था को समाप्त करके स्व व्यवस्था स्थापित करने पर मना है।

दुनिया में जहां जहां भी लोकतंत्र है उनमें पश्चिम के देशों में आंशिक स्व व्यवस्था है और भारत आदि पूर्व के देशों में अव्यवस्था। पूर्व के अन्य देशों से भी भारत में अधिक ही अव्यवस्था है कम नहीं। भारत में अव्यवस्था लगातार बढ़ती ही जा रही है। अव्यवस्था व्यवस्था का निकृष्टतम रूप है और स्व व्यवस्था श्रेष्ठतम। लोकतंत्र में ही अव्यवस्था या स्व व्यवस्था होती है तानाशाही में नहीं और लोकतंत्र ही एकमात्र ऐसी व्यवस्था है जिसमें समाज व्यवस्था परिवर्तन में हस्तक्षेप कर सकता है, तानाशाही में नहीं। यह हमारा सौभाग्य है कि भारत में लोकतंत्र है और अव्यवस्था को स्व व्यवस्था में बदलना हमारे अधिकार क्षेत्र में है। वर्तमान व्यवस्था अव्यवस्था और स्व व्यवस्था के अन्तर निम्न है :–

1. अव्यवस्था त्रुटिपूर्ण संवैधानिक व्यवस्था का परिणाम है, कारण नहीं। अर्थात् त्रुटिपूर्ण संवैधानिक व्यवस्था पहले आई जिसके कारण अव्यवस्था आई। स्वव्यवस्था एक अच्छी व्यवस्था है जिसका परिणाम है अव्यवस्था की समाप्ति। यदि त्रुटिपूर्ण संवैधानिक व्यवस्था की त्रुटियॉ दूर कर दें तो अव्यवस्था समाप्त हो जायेगी।
2. अव्यवस्था में संसद अभिरक्षक (Custodian) की भूमिका में होती है। जिसका अर्थ होता है कि हम अभिरक्षक को पांच वर्ष में एक बार बदलने से अधिक कोई अधिकार नहीं रखते। न तो हम अभिरक्षक को बीच में हटा सकते हैं, न उसके अधिकारों में कोई कमी बेसी कर सकते हैं न अभिरक्षक से कोई प्रश्न कर सकते हैं अभिरक्षक हमारे अधिकारों में कभी भी कमी बेसी कर सकता है या प्रश्न कर सकता है स्व व्यवस्था में संसद की भूमिका मैनेजर की होती है जिसका अर्थ होता है कि हम मैनेजर को कभी भी हटा सकते हैं, अधिकारों में कमी बेसो कर सकते है तथा उसके कार्यो के संबंध में प्रश्न भी कर सकते है।
3. वर्तमान व्यवस्था में भौतिक विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है और सुरक्षा तथा न्याय को गौण। स्व व्यवस्था में सुरक्षा और न्याय शासन को दायित्व होगा तथा विकास अतिरिक्त कर्त्तव्य।
4. वर्तमान व्यवस्था में जनकल्याणकारी कार्य को शासन का दायित्व माना गया है और समाज को सहायक स्व व्यवस्था में जनकल्याणकारी कार्य समाज का दायित्व है। शासन उसमें सहायक है।
5. वर्तमान व्यवस्था में शासन के दायित्व, अधिकार और हस्तक्षेप अधिकतम होते हैं। स्वव्यवस्था में शासन के अधिकार दायित्व तथा हस्तक्षेप न्यूनतम होते हैं।
6. वर्तमान व्यवस्था में व्यक्ति और समाज की निर्णय करने की बौद्धिक शक्ति बहुत कम हो जाती है क्योंकि उसका कोइ उपयोग नहीं हो पाता। स्व व्यवस्था में व्यक्ति, परिवार, समाज की निर्णय करने की बौद्धिक शक्ति में विकास होता है।
7. वर्तमान व्यवस्था में शासन व्यक्ति और समाज के अधिकारों की व्याख्या भी करता है और देता भी है। स्वव्यवस्था में इसके विपरीत होता है।

व्यवस्था परिवर्तन का एक ही अर्थ है संवैधानिक राजनैतिक व्यवस्था परिवर्तन। सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन तो इस परिवर्तन के बाद का चरण है। हमारे अनेक विद्वान व्यवस्था परिवर्तन को सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन से जोड़कर देखते हैं। वे पूरी तरह भूल में हैं। सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन तो हमारा अन्तिम लक्ष्य है जो तब तक प्राप्त नहीं हो सकता जब तक राजनैतिक संवैधानिक व्यवस्था परिवर्तन न हो जाये। एक पड़ से बंधी नाव को नदी में चप्पू चलाने से तब तक आगे नहीं बढ़ाया जा सकता, जब तक पेड़ से नाव की रस्सी न खोल दी जावे। गाय के लिये आंख पर पट्टी बांधकर लगातार आटा पीसने मात्र से गाय का पेट नहीं भरेगा जब तक आटा खा रहे कुत्ते को हटाकर गाय क पहुॅचने का मार्ग ठीक न कर दें।

हम एक जेल में बन्द है जहां अनेक राजनैतिक दल हमें अच्छी से अच्छी सुविधा प्रदान करने हेतु प्रयत्नशील हैं और हमारे कुछ मित्र उन सुविधाओं के अनुसार जीवन जीने की कला का ही व्यवस्था परिवर्तन मान रहे हैं। व्यवस्था परिवर्तन का एक ही अर्थ है ''संवैधानिक राजनैतिक व्यवस्था परिवर्तन'' हम तब तक चप्पू नहीं चलायेंगे जब तक रस्सी न खुल जावे। हम जब तक चक्की नहीं चलायेंगे जब तक कुत्ते को भगाकर गाय की व्यवस्था न हो जावे। हम अपनी सारी शक्ति रस्सी खोलने और कुत्ते को भगाकर गाय को लगाने में लगायेंगे और तब उसके बाद नाव भी चलायेंगे और चक्की भी पीसेंगे। हम समाज निर्माण करें और शासन उसका लाभ उठावे इस व्यवस्था को हम नहीं चलने दें। और शासन को कस्टोडियन के स्थान पर मैनेजर बना दें, यह है व्यवस्था परिवर्तन।

किसी अच्छी से अच्छी व्यवस्था से भी अपनी व्यवस्था अच्छी होती है। यदि व्यवस्था करने वाले की नीयत ही संदेहास्पद हो तो ऐसी व्यवस्था का एक क्षण भी बन रहना हमारी कायरता का प्रतीक है। दुर्भाग्य से आज हम कायरों का आचरण कर रहे हैं। किसी कार्य के परिणाम से प्रभावित व्यक्ति और कार्य के कर्ता के बीच दूरी की मात्रा जितनी अधिक होगी कार्य की गुणवत्ता उसी अनुपात में घटती जायेगी। दुर्भाग्य से आज की व्यवस्था में यह दूरी बहुत अधिक है और बढ़ती ही जा रही है। व्यवस्था परिवर्तन का अर्थ है इस दूरी को न्यूनतम करना। यह दूरी जितनी कम होगी, कार्य की गुणवत्ता भी उतनी ही अधिक बढ़ेगी ओर व्यवस्था करने वाले की नीयत भी सुधरेगी।

इस तरह हम इस नतीजे यह पहुँच रहे हैं कि सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन के मार्ग का रोड़ा वर्तमान राजनैतिक संवैधानिक व्यवस्था में परिवर्तन हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता है जिसका अर्थ है शासन के अधिकार दायित्व तथा हस्तक्षेप न्यूनतम होना, जिसका अर्थ है प्रत्येक इकाई को अपने इकाईगत निर्णय की स्वतंत्रता तथा जिसका अर्थ है राज्य की समाज में कस्टोडियन की भूमिका को समाप्त करके मैनेजर भूमिका में लाना।

पत्रोत्तर

1. श्री कृष्णदेव सिंह, बनियारा, मउ, उत्तर प्रदेश

आपने '' गांधी, गांधीवाद और गांधीवादी '' शीर्षक लेख लिखा। मैंने बहुत पहले ही आपको बताया था कि आप सर्वसेवा संघ के साथ नहों चल पायेंगे किन्तु आप नहीं माने। आखिर वही हुआ। सर्वसेवा संघ खरगोश की चाल चलता है। सर्वसेवा संघ प्रतिवर्ष नये अभियान चलाता है और ऐसे बीसों अभियान चला चुका है जो वास्तव में शुरू ही नहीं हुए। ये सब अभियान चला चुका है जो वास्तव में शुरू ही नहीं हुए। ये सब अभियान सिर्फ कागजों में चलते रहते हैं। गांधीवादियों में जो संस्कारित लोग हैं वे अपना चरित्र थोप थोपकर दसरों के उपर हावी हो जाते है। ये लोग डरते हैं कि यदि सर्वोदय में विचार मंथन प्रारंभ हो गया तो वे बौने सिद्ध हो जायेंगे। ऐसे लोगों में दम भी बहुत है। अच्छा हुआ जो विलम्ब से ही सही किन्त आपको सच्चाई का अनुभव हुआ।

2. एम.एस. सिंगला, बैंक कॉलोनी, नाका मदार, अजमेर – 305007

ज्ञानतत्व अंक बान्नवे मिला। वैसे तो प्रत्येक अंक के लेख और पत्रोत्तर पर प्रतिक्रिया की आवश्यकता महसूस होती है किन्तु इस अंक के शीर्ष लेख ''गांधी, गांधीवाद और गांधीवादी'' तो अत्यन्त ही गंभीर बन पड़ा है। लेख बिल्कल मौलिक और झकझोरने वाला है। संगठन विचारों की कब्र होता है, गांधीवादी नहीं क्योंकि गांधी की दाण्डी यात्रा किसी समस्या के समाधान के निमित्त आयोजित थी और गांधीवादियों की दाण्डी यात्रा गांधी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के निमित्त उस यात्रा की नकल, आदि वाक्य हरक विचार के रूप में लेख में पिरोये गये हैं। वास्तव में सत्य के पुजारी गांधी को इस प्रकार समझकर उन्हें प्रस्तुत करना ही गांधीवादी को सही रूप में प्रतिपादित करना है। यह गांधीवाद का सच्चा स्वरूप है किन्तु दुर्भाग्य है कि संस्कारित गांधीवादियों के समक्ष विचारक गांधीवादी बेचारे चुप होकर बैठने को मजबूर रहते ह।

3. प्रो. महेन्द्र जोशी, भारतभाषा भूषण, 30 ए, गोपाल नगर, अमृतसर – 143001

ज्ञान तत्व अंक बान्नवे पढ़ा। गांधी, गांधीवाद और गांधीवादी शीर्षक लेख में आपने गांधीवादियों के विषय में अक्षरशः सत्य लिख दिया है। आज गांधीवाद को समाज से दूर ल जाकर एक असफल विचारधारा बना देने का सम्पूर्ण दायित्व गांधोवादियों का है, गांधी का नहीं। मुझे बहुत खुशी है कि आप देश और समाज की समस्याओं पर इतना सूक्ष्म विवेचन कर रहे हैं। मेरी हार्दिक इच्छा है कि इस सड़ी गली व्यवस्था पर इसी तरह लगातार प्रयास जारी रहें।

4. श्री बुधमल शामसुखा, सफदरगंज एन्क्लेव, नई दिल्ली

ज्ञान तत्व अंक बान्नवे में आपने '' गांधी, गांधीवाद और गांधीवादी '' शीर्षक से एक बहुत ही तथ्यपूर्ण लेख लिखा है। मैं आपकी इस बात से सहमत हूँ कि हमारी वैश्विक, राष्ट्रीय और सामाजिक समस्याओं का समाधान सिर्फ गांधीवाद के ही पास है। किन्तु अपने वर्तमान संदर्भ में हमारे लिये गांधीवाद एक निर्जीव, निष्क्रिय और छद्म छाया मात्र के अतिरिक्त कुछ नहीं रह गया है।

गांधीजी के जीवन काल के अन्तिम दिनों में ही गांधीवाद का बिखराव प्रारंभ हो गया था। भारतीय स्वतंत्रता (पंद्रह अगस्त) की घोषणा के साथ ही यह स्पष्ट हो गया था कि भारतीय संगठन गणतंत्र का शासन विदेशी तर्ज वाली गणतांत्रिक प्रणाली के ही आधार पर होगा। नई व्यवस्था में गांधी जी द्वारा प्रस्तावित हिन्द स्वराज वाली शासन व्यवस्था को पूरी तरह नकार दिया गया था। यह गांधीवाद पर पहला प्रहार था।

गांधी जी ने अपनी हत्या के कुछ समय पूर्व कांग्रेस के लिये एक नये विधान की रचना शुरू की थी। अपने अपूर्ण विधान में उन्होंने कांग्रेस को सत्ता को दूर रहकर एक सेवा संस्था के रूप में स्थापित ओर विकसित होने की बात कही थी। कांग्रेस न उक्त विधान को दबाये रखा और सत्ता के

कारण को ही अपना अहोभाग्य माना। यह गाधीवाद पर दूसरी करारी चोट थी। इसके बाद का इतिहास तो राज्यसत्ता द्वारा योजनापूर्वक गांधीवादी विचारधारा को सर्वथा नष्ट करने की एक लम्बी कहानी है। इस योजना का विरोध करने वाले तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष राजर्षि पुरूषोत्तम दास टंडन को तो कांग्रेस से ही निकाल दिया गया था।

अब इन सत्ताधीश अधिकांश कांग्रेस जनों ने राजनीति में प्रवेश कर लिया था। कुछ लोग उनके छुटभैये नेता बनकर सत्ता का लाभ लेने लग गये थे। बचे हुए अनेक गांधीवादियों को भिन्न भिन्न प्रकार के पद पुरस्कार और प्रलोभन देकर राजसत्ता ने गुलाम बना लिया। गांधीवादी संस्थाओं का केन्द्रीयकरण कर दिया गया। सरकारी दान अनुदान एवं भूमि बांटकर नई नई संस्थाओं का निर्माण किया गया। कुछ आयोग बने (खादी आयोग, शिक्षा आयोग) कुछ कमीशन बैठे और कुछ कमेटियॉ बनकर गांधीवादी विचारधारा को विकृत कर दिया गया और सरकारी सुविधाओं के वातानुकूलित कमरों तक गांधीवाद सिमट कर रह गया। गांधीजी के वर्ध और साबरमति आश्रम उजड़कर वीरान हो गये। स्वयं आचार्य विनोबा पर शासन सत्ता का कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन्होंने स्वशासी और स्वतंत्र भारत में सत्यागह की आवश्यकता को ही नकार दिया। शासन ने विनोबा को ऐसा राष्ट्र संत घोषित किया कि उन्होंने गांधीवादियों और गांधीवादी संस्थानों को पूरी तरह राजनीति निरपेक्ष बनाकर सत्ता को पूरी तरह निरंकुश होने की छुट प्रदान कर दी। विनोबा जी ने आपातकाल तक को अनुशासन पर्व की संज्ञा दे दी।

स्वतंत्रता सेनानियों को पेंशन, गांधीवादियों को पुरस्कार और सर्वोदय कार्यकर्ताओं को आर्थिक मदद देकर शासन ने उनके नैतिक बल को पूरी तरह विकृत कर दिया। परिणाम हुआ कि गांधीवाद को समग्रता से समझने समझाने की प्रकिया का लोप हो गया। अब तो कुछ लोग यात्राएं निकालकर सभा सेमीनार निमंत्रित करके, सरकार द्वारा निमंत्रित सभाओं में गांधीवाद की आधी अधूरी व्याख्याऍ और भाषण देते रहते हैं और सरकारी खाते से प्राप्त सहायता से आदर्श ग्रामों की रचना के नाम पर मूल विषय से हटकर स्वयं को गांधीवादी आदर्शो के रक्षक होने का भ्रम पाले हुए है। कुछ लोग साहित्य छापने तक और उसमें पुराने विचारो की पुनरावृत्ति तक ही सीमित हैं। ऐसे भी लोग हैं जो अपनी पहचान बनाये रखने के लिये साम्प्रदायिक संस्थाओं से जुड़ गये हैं। ऐसे लोग सत्य और अहिंसा की प्रतिष्ठा के नाम पर साम्प्रदायिकता का पोषण कर रहे हैं।

सच तो यह है कि संविधान संशोधन अथवा गांधीजी की शैली पर देश के किसी कोने में कोई छोटा सा प्रयोग करने मात्र से गांधीवाद का पुर्नजागरण नहीं होगा। गांधीवाद तो विचार एवं क्रिया एवं किया और विचार के सतत प्रवाह से विकसित होता है। उसमें कर्म प्रधान है। गांधी तो शोषण मुक्त और शासन मुक्त समाज के आदर्श को आधार बनाकर सम्पूर्ण व्यवस्था में बदलाव का पक्षधर रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि सच्चे गांधीवादी चिन्तक टुकड़ों में सोचने की अपेक्षा समग्र दृष्टि स विचार करने की ओर उन्मुख हो।

5. श्री रूद्रमान, होलपुर गंगा, आजमगढ़ उत्तर प्रदेश

मैं आपके गांधी, गांधीवाद और गांधीवादी लेख को पूरा पढ़ा। लेख के कुछ अंश तो बिल्कुल ही ठीक है जिसमें आपने लिखा कि जिसने गांधी को नहीं समझा वह गांधीवाद को क्या समझेगा या आज भारत को आज एक गांधी की जरूरत है। आप इस लेख के लिये बधाई के पात्र हैं।

11/2/96/ च **संशोधित आमंत्रण–पत्र**

प्रिय साथियों,

ज्ञानयज्ञ मंडल ने भारत की वर्तमान समस्याओं के समाधान की दिशा में व्यवस्था परिवर्तन को अपना लक्ष्य घोषित किया है। अब तक इस दिशा में संस्था के रूप में सर्वसेवा संघ, भारत विकास संगम तथा लोक स्वराज्य मंच निरंतर आगे बढ़ रहे हैं। ज्ञानयज्ञ मण्डल का केन्द्रीय कार्यालय दिल्लो से काम करना आरंभ कर चका है। ठीक दिशा में योजनाबद्ध तरीके स निरंतर प्रगति के प्रयास जारी है।

इस दिशा में गंभीर विचार मंथन करके आगे की कार्य योजना के उद्दश्य से दिल्ली में दिनांक दो, तीन और चार सितम्बर, दो हजार पांच शुक्रवार, शनिवार और रविवार को 'व्यवस्था परिवर्तन अभियान' सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। सम्मेलन की प्रस्तावित रूप रेखा इस प्रकार है :–

1. आयोजक – ज्ञान यज्ञ मण्डल
   सहआयोजक – 1. भारत विकास संगम 2. लोक स्वराज्य मंच
2. अवधि – तीन दिन 2, 3, 4 सितम्बर 2005
   (स्थान की घोषणा बाद में की जायेगी)
3. नाम – व्यवस्था परिवर्तन अभियान सम्मेलन

कार्यक्रम :

02 सितम्बर 2005 दिन शुक्रवार

प्रातः 10 बजे	उद्घाटन
प्रातः 10:30 से 2 बजे	वर्तमान व्यवस्था पर मूल्यांकन और व्यवस्था परिवर्तन क्यों विषय पर विचार मंथन।
दोपहर 3 से 7 बजे	व्यवस्था परिवर्तन क्या विषय पर विचार मंथन।
सायं 7 से 8 बजे	अध्यक्ष द्वारा चयनित दो या तीन वक्ताओं के भाषण।

03 सितम्बर 2005 दिन शनिवार

प्रातः 8 से 2 बजे 'नई व्यवस्था के प्रारूप' पर संक्षिप्त चर्चा।
दोपहर बाद 3 से 7 बजे व्यवस्था परिवर्तन कैसे विषय पर विचार मंथन
सायं 7 से 8 बजे अध्यक्ष द्वारा चयनित दो या तीन वक्ताओं के भाषण

04 सितम्बर 2005 दिन,रविवार

प्रातः 8 से 2 बजे व्यवस्था परिवर्तन अभियान की कार्य योजना
दोपहर 3 से 5 बजे घोषणाएं तथा समापन
05 व्यवस्था भोजन और निवास निःशुल्क रहेगा।
6 सतर्कता व्यवस्था परिवर्तन का अर्थ संवैधानिक राजनैतिक व्यवस्था परिवर्तन तक सीमित है। सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन पर चचा को विषय से बाहर माना जायेगा।

7. मंथन प्रणाली – प्रश्नोत्तर और सुझाव प्रणाली को प्रोत्साहित तथा भाषण प्रणाली को निरूत्साहित किया जायेगा। भाषण के लिये भाषण की बिल्कुल अनुमति नहीं होगी।

8. विशेष आमंत्रित – उद्घाटन समापन, अध्यक्षता अथवा विशेष भाषण के लिये किसी को विशेष रूप से आमंत्रित नहीं किया जायेगा। सहभागियों म से ही चयन किया जायेगा।

9. संचालन – सम्पूर्ण संचालन बजरंगलाल के मार्गदर्शन में होगा।

10. अनुशासन – सम्पूर्ण चर्चा मं अधिकतम समानता का प्रयास किया जायेगा। किन्तु समयाभाव के कारण कठार अनुशासन का पालन आवश्यक है। मंच संचालक की भूलों के लिये लिखकर या सत्र समाप्ति के बाद मौखिक प्रतिवाद किया जा सकता है। ऐसे मामाला में माननीय ठाकुरदास जी बंग, आर्यभूषण जी भारद्वाज, गोविन्दाचार्य जी, रामबहादुर जी राय तथा शरद साधक जी की कमेटी निर्णय करेगी। प्रत्येक सत्र के प्रत्येक विषय पर संचालक के विस्तृत विचार आप तक शीघ्र ही भेजे जायेंगे। अन्य विद्वानों के भी जो विचार उपलब्ध होंगे वे यथा शीघ्र आपको भेजे जायेंगे। जिससे आपको तैयारी करने का पर्याप्त अवसर मिले। आप भी अपने विचार लिखकर भेज दें तो हम उन्हें सबके बीच विचारार्थ प्रसारित कर देंगे। उक्त सम्मेलन व्यवस्था परिवतन के लिये बहुत महत्वपूर्ण होगा। सम्मेलन की समाप्ति पर किसी विशेष कार्यक्रम की घोषणा निश्चित है। आपकी उपस्थिति विचार मंथन की दृष्टि से बहुत उपयोगी होगी। व्यवस्था परिवर्तन के इस कठिन प्रयास में आपकी सहभागिता और उपस्थिति बहुत आवश्यक है। आपसे निवेदन है कि आप उक्त तिथियों पर दिल्ली अवश्य आईये। आप अपने साथ इस लक्ष्य के लिये उपयोगी अन्य साथियों को भी ला सकते हैं। आमंत्रण पत्र की औपचारिकता यहां पूरी कर ली जायेगी।

****